बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 46

ढांचागत सुधार जरूरी

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में वृद्धि के अनुमान को संशोधित करके वर्ष 2019-20 और 2020-21 के लिए 20 आधार अंक कम कर दिया है।

आईएमएफ का अनुमान है कि चालू वित्त वर्ष में देश की जीडीपी वृद्धि दर 7.3 फीसदी रहेगी जबकि आने वाले वर्ष में इसके 7.5 फीसदी रहने की उम्मीद है। आईएमएफ तीसरी ऐसी बहुराष्ट्रीय एजेंसी है जिसने हाल के दिनों में वृद्धि के अनुमान को कम किया है। गत सप्ताह विश्व बैंक और एशियाई विकास बैंक दोनों ने 2019-20 में देश की जीडीपी वृद्धि दर के अनुमान को कम किया था। उन्होंने और आरबीआई दोनों ने अनुमान लगाया कि यह 7.2 फीसदी रहेगी। यह पिछले अनुमान से 20 आधार अंक कम था। केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय ने फरवरी में अनुमान जताया था कि वर्ष 2018-19 में यह दर 7 फीसदी रहेगी। इससे पहले उसने इसके 7.2 फीसदी रहने का अनुमान जताया था। कहने का अर्थ यह कि देश की वृद्धि के अनुमान में चौतरफा गिरावट आई है।

यह बात ध्यान देने लायक है कि बहुपक्षीय एजेंसियों को लग रहा है कि अगले दो वर्ष में देश की वृद्धि दर 7 फीसदी से 7.4 फीसदी या 7.5 फीसदी रह सकती है। यह अनुमान काफी हद तक शिथिल राजकोषीय और मौद्रिक नीति तथा मांग में सुधार पर निर्भर करता है, न कि निजी निवेश में सुधार पर। इसमें आरबीआई द्वारा हालिया मौद्रिक नीति शिथिलता और प्रमुख नीतिगत दरों में दो बार की गई कटौती भी परिलक्षित होती है। परंतु आरबीआई के पास वृद्धि को प्रोत्साहन देने के लिए बहुत सीमित गुंजाइश है क्योंकि सरकारी उधारी में पर्याप्त कमी नहीं आई है। आईएमएफ ने भारतीय अर्थव्यवस्था को लेकर जो अनुमान जताया है उसमें कहा गया है कि भारी-भरकम कर्ज को कम करना होगा। यह उचित है क्योंकि यह निजी निवेश और ऋण पर भारी पड़ रहा है।

भारत को वैश्विक स्तर पर भी प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है और इन एजेंसियों ने अमेरिका और चीन के बीच बढ़ते तनाव, यूरोप में मंदी और ब्रेक्सिट की अनिश्चितता के बीच 2019 में वैश्विक वृद्धि के अनुमान को भी 20 आधार अंक घटाकर 3.3 फीसदी कर दिया है। यह 2008 के वित्तीय संकट के बाद का न्यूनतम स्तर है। निश्चित तौर पर भविष्य में कच्चे तेल की कीमतें भी इसमें अहम भूमिका निभाएंगी।

स्पष्ट है कि भविष्य में सतत विकास की दिशा में आगे बढ़ने के लिए अगली सरकार के यथास्थितिवादी होने से काम नहीं चलेगा। अगर सुधारों को लेकर धीमेपन का मौजूदा माहौल बरकरार रहा तो भारत ज्यादा से ज्यादा नए जीडीपी आंकड़ों के मुताबिक 7.5 फीसदी के आसपास की स्थिर विकास दर हासिल कर पाएगा।

यह पर्याप्त नहीं है। जरूरत है देश की वृद्धि दर में इजाफा करने की। ऐसा तभी हो सकता है जबकि गहन ढांचागत सुधारों को प्राथमिकता पर अंजाम दिया जाए। दुर्भाग्य की बात है कि फिलहाल किसी भी राजनीतिक दल के एजेंडे पर ये नजर नहीं आ रहे। श्रम और भूमि सुधारों को नए सिरे से जांचने की आवश्यकता है ताकि निजी निवेश के गतिरोध का पता चल सके। यह भी स्पष्ट है कि राज्य समर्थित वृद्धि देश की वृद्धि दर को सालाना 8 फीसदी से अधिक गति प्रदान करने में सक्षम नहीं है। न ही यह पहले की तरह निजी निवेश ला पाने में भी नाकाम है।

यह सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि सरकार अब कम उधारी ले ताकि निजी निवेश गति पकड़ सके और देश की वृद्धि दर दोबारा ऊंचाई हासिल कर सके।

अजय मोहंती

निष्पक्षता के रूप में न्याय बनाम वितरणकारी न्याय

गरीबों को आर्थिक विकास की प्रक्रिया में शामिल करने के लिए दोनों राजनीतिक दल हस्तांतरण प्रस्ताव लेकर आए हैं। इस संदर्भ में राजनीतिक अर्थशास्त्र का परीक्षण कर रहे हैं **रथिन रॉय**

कल्याणकारी अर्थशास्त्र का दूसरा सिद्धांत कहता है कि एक अर्थव्यवस्था के अपने चरम पर होने की स्थिति में समाज की चाहत से अधिक कमाने वाले लोगों पर कर लगाने से मिली राशि कम कमाने वाले लोगों को हस्तांतरित कर कोई भी वांछित आय वितरण हासिल किया जा सकता है। मैं पहले भी कह चुका हूं कि 'सबके लिए बुनियादी आय' (यूबीआई) सुनिश्चित करने से संबंधित प्रस्ताव मूलत: इस सिद्धांत के आगे घुटने टेक देते हैं। कुछ राजनीतिक दलों की तरफ से रखे गए आय हस्तांतरण प्रस्तावों से संबंधित राजनीतिक अर्थव्यवस्था पर इस लेख में चर्चा की जाएगी।

राजनीतिक अर्थव्यवस्था का तर्क है कि आय हस्तांतरण न्याय के लिहाज से जरूरी है। जॉन रॉल्स 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' और 'वितरणकारी इंसाफ' के बीच विभेद करते हैं। पहली धारणा के मुताबिक, समान स्वतंत्रता और अवसरों की समानता के साथ आर्थिक इंतजाम जुड़े होते हैं। एक उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्था में आर्थिक वृद्धि की प्रक्रिया जितना अधिक समावेशी होगी- यानी जितने अधिक लोग शिरकत करें और आर्थिक वृद्धि लाने में भागीदारी से लाभ उठाएं, 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' सुनिश्चित करना उतना ही अधिक होगा।

'वितरणकारी न्याय' का मतलब उत्तराधिकार में कुछ लोगों को मिले लाभ का स्तर दुरुस्त करने से है। अलग बौद्धिक या भौतिक क्षमताएं बढ़ाने और अर्जित पूंजी में फर्क के चलते क्षमता बढ़ाने के लिए किए गए निवेशों से होने वाले लाभों का वितरण असमान हो सकता है। इस स्थिति को सुधारने की जरूरत है। यह सकारात्मक कदम को बढ़ावा देने के साथ ही परिसंपत्ति एवं संपत्ति कराधान पर थॉमस पिकेटी के तर्कों और सबको एक बुनियादी आय सुनिश्चित करने का आधार बनता है।

रॉल्स का तर्क है कि राजनीतिक अर्थव्यवस्था के पहले सिद्धांत को दूसरे सिद्धांत पर अहमियत मिलती है। अगर पहला सिद्धांत लागू नहीं होता है तो दूसरे सिद्धांत का अनुपालन बाकी रह जाता है। समावेशन के बगैर हुई वृद्धि पूंजी और उत्तराधिकार तक असमान पहुंच से हासिल लाभों को मुंह चिढ़ाती है।

दिलचस्प बात यह है कि रॉल्स इसकी व्याख्या सार्वजनिक वित्त के संदर्भ में करते हैं। मसग्रेव का अनुसरण करते हुए रॉल्स सार्वजनिक वित्त की चार शाखाओं का वर्गीकरण करते हैं जिनमें से हरेक शाखा विभिन्न आयामों में न्याय देने के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है।

आवंटन शाखा हस्तक्षेप का जिक्र करती है ताकि मूल्य प्रणाली न्याय प्रदान करने के खिलाफ न हो। सापेक्ष कीमतें आय और संवहनीयता दोनों का नियमन करती हैं और दोनों तरह का न्याय सुनिश्चित करने के लिए इनका सुसंगत होना अनिवार्य है। स्थिरीकरण शाखा यह सुनिश्चित करती है कि वृहद-आर्थिक हालात 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' स्थापित करें और वितरणकारी अन्याय को और न बढ़ाए।

हस्तांतरण शाखा 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' के लिए आय का एक न्यूनतम स्तर और सार्वजनिक एवं योग्यता-आधारित उत्पादों तक सबकी पहुंच सुनिश्चित करती है। महज बाजार मशीनरी पर निर्भर रहते हुए इन उत्पादों तक पहुंच नहीं हो सकती है। वहीं वितरण शाखा का ताल्लुक वितरणकारी हिस्सों में न्याय सुनिश्चित करने से है।

वृद्धि को अधिकतम करने की इच्छा के पीछे प्रेरणा आर्थिक कॉमनवेल्थ को इस स्तर तक बढ़ाने की है कि आर्थिक हिस्सेदारी का आकार 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' के लिए रोक न बन जाए। अगर आर्थिक हिस्सेदारी बढ़ती भी है तो बाजार ऐसा न्याय नहीं सुनिश्चित कर पाएगा। ऐसी स्थिति में एक न्यायपूर्ण सरकार सार्वजनिक वित्त का इस तरह इस्तेमाल करती है कि संसाधनों का आवंटन, सभी के उपभोग वाले उत्पादों की व्यवहार्यता और समग्र वृहद-आर्थिक प्रबंधन 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' को बढ़ाए। मानवीय क्षमताओं का विकास एक सामूहिक प्रयास होने से राज्य स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसे सार्वजनिक एवं गुणवत्तापरक उत्पाद मुहैया कराने के लिए सार्वजनिक वित्त का इस्तेमाल करता है। यह समावेशी विकास और इस तरह 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' सुनिश्चित करता है। परिसंपत्तियों, व्यवसाय और पूंजी पर लगने वाले करों का इस्तेमाल 'वितरणकारी न्याय' सुनिश्चित करने के लिए हस्तांतरण का वित्तपोषण करने में किया जाता है। असमान पूंजी एवं बौद्धिक प्रतिदानों के चलते कुछ लोगों को मिलने वाले अनुचित लाभों का उन्मूलन कर ऐसा किया जा सकता है।

दोनों ही राष्ट्रीय दलों ने इसी रुख पर चलते हाल में हस्तांतरण योजनाओं की बातें की हैं। किसान विभिन्न वजहों से अन्याय का सामना करते हैं जिनकी वजह से वे कृषि उपज में काफी तेजी आने के बावजूद एक टिकाऊ एवं समुचित आय नहीं कमा पाते हैं। साफ है कि कृषि परिदृश्य में 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' प्रदान करने में नाकामी रही है। 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' के अभाव की भरपाई के लिए आय हस्तांतरण करने से ही समस्या का समाधान नहीं निकलेगा। बिचौलियों का खात्मा, भूमि सुधार और कृषि सेवाओं तक समान पहुंच सुनिश्चित करना दोनों तरह के न्याय के लिए अहम है। आय हस्तांतरण केवल तभी सकारात्मक भूमिका अदा कर सकता है जब बाकी वितरणकारी गतिविधियां भी काम करें।

भारत के विकास पथ में गरीबी की समस्या को खासी तवज्जो दी जाती रही है। हालांकि समकालीन दौर में गरीबी के चंगुल में फंसने की आशंका वाली आबादी उन्हीं लोगों की है जो 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' से वंचित रह गए हैं। ऐसे में कोई विवाद नहीं हो सकता है कि यह ऐसा मामला है जब भारतीय अर्थव्यवस्था के शीर्ष संकेतक अग्रणी 10 फीसदी लोगों के उपभोग से संबंधित हैं। वंचित गरीबों को किया जाने वाला आय हस्तांतरण वृद्धि प्रक्रिया में निष्पक्षता के रूप में न्याय की कमी की केवल भरपाई कर सकता है, उसकी जगह नहीं ले सकता है।

दोनों ही मामलों में 'वितरणकारी न्याय' सुनिश्चित करने के समुचित साधन का इस्तेमाल 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' दे पाने की नाकामी की भरपाई के लिए किया जा रहा है। इन प्रस्तावों के बारे में मेरी चिंता के केंद्र में यही है, उनकी व्यवहार्यता या उपयोगिता का सवाल अहम होते हुए भी प्रक्रियागत मसला है।

मैं उतना चिंतित नहीं होऊंगा अगर इन आय हस्तांतरण प्रस्तावों के डिजाइन को दी गई तवज्जो के साथ यह सवाल भी उठे कि करीब 30 वर्षों तक तीव्र आर्थिक वृद्धि के बाद भी यह विशाल अर्थव्यवस्था उत्पादक समावेशन के जरिये निष्पक्षता के रूप में न्याय दे पाने में क्यों नाकाम रही है? इसका एकमात्र राजनीतिक जवाब अर्थव्यवस्था की इस नाकामी का नुकसान उठाने वाले लोगों को भरपाई करना है। मेरी राय में तो यह राजनीतिक जवाबदेही का परित्याग करना है।

(लेखक नैशनल इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक फाइनैंस ऐंड पॉलिसी के निदेशक हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

चुनावी घोषणापत्रों की क्यों घट रही है विश्वसनीयता?

दिल्ली डायरी

ए के भट्टाचार्य

राष्ट्रीय दल अपने चुनावी घोषणापत्र जारी कर चुके हैं। यह साफ हो चुका है कि वे राजकोषीय विवेक से कितने दूर हैं। सत्ता में वापसी की प्रतीक्षा कर रही कांग्रेस ने 2 अप्रैल को और भारतीय जनता पार्टी ने 8 अप्रैल को घोषणापत्र जारी किया। दोनों घोषणापत्रों में किए गए कई आर्थिक वादे न केवल राजकोषीय दृष्टि से गलत हैं बल्कि वे यह भी बताते हैं कि आर्थिक नीति से जुड़े वादे करते वक्त हमारे राजनीतिक दल कैसे अव्यावहारिक हो जाते हैं?

कांग्रेस की न्याय योजना के तहत समाज के निचले तबके के 20 फीसदी परिवारों को 6,000 रुपये मासिक देने की बात कही गई है। इस चरणबद्ध योजना की लागत राज्यों के साथ मिलकर वहन की जाएगी। पूरे क्रियान्वयन के बाद यह देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) पर 1.9 फीसदी का बोझ डालेगी। ऐसे में संसाधन कहां से आएंगे, यह सवाल तो उठता ही है।

क्या इसके लिए नए कर लगाए जाएंगे या सब्सिडी तथा अन्य गरीबी उन्मूलन योजनाओं की खातिर किया गया आवंटन कम किया जाएगा? इस मुद्दे पर व्यापक अस्पष्टता के अलावा एक चिंता यह भी है कि योजना का क्रियान्वयन आसान नहीं होगा। योजना के लाभार्थी परिवारों की पहचान आय के आधार पर करनी होगी। इसमें चूक होने की प्रबल आशंका है। ऐसा इसलिए क्योंकि पारिवारिक आय को लेकर विश्वसनीय आंकड़े नहीं हैं।

वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) पर कांग्रेस के वादे की बात करें तो उसने एक दर वाले जीएसटी की बात कही है। यह एक बड़ा वादा है लेकिन गहराई से अध्ययन करें तो इसमें तीन दरों की बात कही गई है। हालांकि यह मौजूदा व्यवस्था से बेहतर है लेकिन एकल दर का वादा क्यों किया गया?

कर वंचना रोकने की पारदर्शी व्यवस्था ई-वे बिल की व्यवस्था खत्म करने का वादा जीएसटी कर प्रणाली के लिए नई चुनौतियां लाएगा। यह अपने आप में एक पहेली है क्योंकि ई-वे बिल का न तो कोई विरोध हो रहा है न ही उसके क्रियान्वयन में दिक्कत आई। यकीनन इससे छोटे कारोबारी और व्यापारी प्रसन्न होंगे जिन्हें बढ़ा कर अनुपालन पसंद नहीं आता। परंतु क्या इससे जीएसटी प्रभावी होगा?

कांग्रेस के घोषणापत्र में सूक्ष्म, लघु एवं मझोले उपक्रमों (एमएसएमई) के लिए नए पैकेज के वादे में भी खामी है। इसमें एमएसएमई का वर्गीकरण रोजगारशुदा लोगों की तादाद के आधार पर करने की बात कही गई है। ऐसे समय में जबकि स्वचालन और तकनीक ने कर्मचारियों की तादाद पर असर डाला है यह कितना उचित है? अगर किसी उपक्रम में 101 से 500 के बीच कामगार होंगे तो इसे मझोला उपक्रम माना जाएगा और इसे विभिन्न प्रकार की रियायतें नहीं मिलेंगी। रियायतों का लाभ केवल 101 से कम कर्मचारियों वाले सूक्ष्म और लघु उद्यमों को मिलेगा। यानी विभिन्न उद्यमों को यह प्रोत्साहन मिलेगा कि वे कम से कम तीन वर्ष तक लाभ लेने के लिए कर्मचारियों की तादाद कम रखें।

भाजपा के घोषणापत्र के वादों में कम समस्या नहीं है। उसमें प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना का विस्तार सभी किसानों तक करने की बात कही गई है, चाहे उनके पास कितनी भी जमीन हो। सरकार ने दो हेक्टेयर से कम रकबे वाले 12.5 करोड़ किसानों को सालाना 6,000 रुपये देने के लिए 75,000 करोड़ रुपये के व्यय की व्यवस्था की है। अब कृषि योग्य सारी भूमि इसके दायरे में आएगी और बाकी बचे 2.1 करोड़ किसानों को भी योजना का लाभ मिलेगा। यानी योजना की वार्षिक लागत करीब 87,600 करोड़ रुपये हो जाएगी। 27 लाख करोड़ रुपये के बजट में यह बढ़ोतरी बहुत अधिक नहीं है लेकिन छोटे और सीमांत किसानों के रूप में जरूरतमंद को मदद पहुंचाने का लक्ष्य खो जाएगा।

किसानों को बिना ब्याज के एक लाख रुपये तक कर्ज देने का वादा भी गैरजिम्मेदाराना है। इससे कुल ऋण 14.6 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच जाएगा जो वर्ष 2017-18 में वितरित 11.6 लाख करोड़ रुपये के कुल कृषि ऋण से ज्यादा है। सरकार लगभग यह कह रही है कि कृषि ऋण को ब्याज मुक्त कर दिया जाएगा।

इस ब्याज का बोझ कौन वहन करेगा? सरकार पहले ही ब्याज पर राहत दे चुकी है जिसकी लागत गत वर्ष 15,000 करोड़ रुपये पड़ी थी। अगर 14.6 लाख करोड़ रुपये के ऋण पर ब्याज माफ हुआ तो बोझ बहुत बढ़ जाएगा। इसके लिए पैसा कहां से आएगा?

बैंक पहले ही मुद्रा ऋण के बोझ तले दबे हुए हैं। बीते चार वर्ष में इस ऋण का समेकित मूल्य करीब 8.26 लाख करोड़ रुपये हो गया। कई मुद्रा ऋण छोटे और लघु उपक्रमों के लिए थे और वे बिन गारंटी के वितरित किए गए। अब तक इसके पुनर्भुगतान की दर ऊंची रही है लेकिन इनमें से कुछ ऋण के फंसे कर्ज में तब्दील होने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता है। उसके बाद बैंकों से यह उम्मीद नहीं की जानी चाहिए कि वे किसानों को एक लाख रुपये तक के ब्याज रहित ऋण का बोझ उठाएंगे।

आखिर में बात करते हैं भाजपा के 2024 तक बुनियादी विकास में 100 लाख करोड़ रुपये के निवेश के लक्ष्य की। इसके लिए सरकार को पूंजीगत व्यय में हर वर्ष 60 फीसदी का इजाफा अगले पांच वर्ष तक करना होगा। वर्ष 2013-14 में देश का कुल पूंजीगत व्यय 6 लाख करोड़ रुपये था। इसमें तमाम बजट और बजट से इतर संसाधन, सरकारी कंपनियों के संसाधन और रेलवे का व्यय शामिल था। 2018-19 तक यह बढ़कर 9.61 लाख करोड़ रुपये हो जाएगा। मोदी सरकार के पांच साल में यह वृद्धि सालाना 10 फीसदी की रही। ऐसे में इस वृद्धि को छह गुना बढ़ाने का वादा कुछ ज्यादा ही बड़ा है।

घोषणापत्र में ऐसे गुलाबी वादे निरंतर अप्रासंगिक होते जा रहे हैं क्योंकि इन्हें मतदाताओं का भरोसा हासिल नहीं होता है। राजनीतिक दल का घोषणापत्र मतदाताओं के साथ संबंध कायम करने की पहली सीढ़ी होता है। अगर यह रिश्ता कमजोर राजनीतिक समझ और कम विश्वसनीयता वाले दस्तावेज पर आधारित हो तो यह देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था को धक्का है।

कानाफूसी

तृणमूल की अभिलाषा

तृणमूल कांग्रेस अपने आप को एक ऐसा राष्ट्रीय दल मानती है जो क्षेत्र विशेष में प्रभावशाली है। पार्टी का यह भी मानना है कि आगामी लोकसभा चुनाव में वह शीर्ष तीन दलों में से एक होगी और अगली सरकार बनने में उसकी निर्णायक भूमिका होगी। मंगलवार को पार्टी के नेता डेरेक ओब्रायन ने नई दिल्ली में संवाददाता सम्मेलन को संबोधित किया। इस चुनावी मौसम में अपने पहले संवाददाता सम्मेलन में ओब्रायन ने पूरी तरह हिंदी भाषा का प्रयोग किया जबकि वह अंग्रेजी और बांग्ला भाषाओं में कहीं अधिक सुविधाजनक महसूस करते हैं। जाहिर है हिंदी भाषा का प्रयोग करके वह अपनी पार्टी की राष्ट्रीय राजनीति में होने जा रही केंद्रीय भूमिका को ही रेखांकित कर रहे थे। उन्होंने कहा कि वह अगले कुछ सप्ताह में और अधिक संवाददाता सम्मेलनों को संबोधित करेंगे और हिंदी में ज्यादा से ज्यादा बात करेंगे।

नामकरण

अखिल भारतीय अन्ना द्रमुक (एआईएडीएमके) से निष्कासित वी के शशिकला के भांजे टीटीवी दिनाकरन को उनकी तीखी जुबान के लिए जाना जाता है। वह अपनी चुनावी रैलियों में जब विरोधियों की आलोचना करते हैं तो सीधे उनका नाम लेने के बजाय छद्म नामों का प्रयोग करते हैं। वह तमिलनाडु के मुख्यमंत्री पलनिस्वामी को 'त्यागी' और उनके समर्थक धड़े को 'त्यागी ऐंड कंपनी' कहकर पुकारते हैं। इसी प्रकार उपमुख्यमंत्री ओ पनीरसेल्वम को वह 'श्रीमान धर्म युद्धम', मंत्री राजेंद्र बालाजी को मंतिरवदि (काले जादू का जानकार), डीएमडीके की कोषाध्यक्ष और विजयकांत की पत्नी को रजनीकांत की हॉरर फिल्म 'चंद्रमुखी' का नाम दिया है और भाजपा नेता और केंद्रीय वित्त राज्य मंत्री पोन राधाकृष्णन को उन्होंने 'बैलवान' (पहलवान) का नाम दिया है। पलनिस्वामी के करीबी मंत्रियों वेलुमणि और तंगामणि को वह 'निविदा मंत्री' कहते हैं।

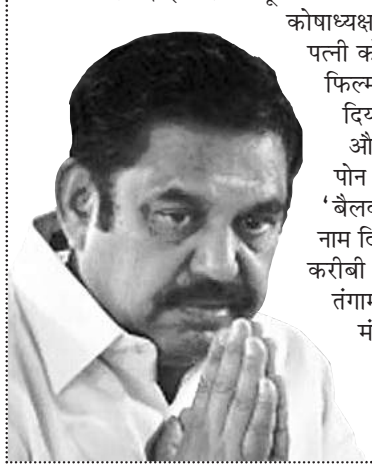

आपका पक्ष

बढ़ती गर्मी में पशुधन की रक्षा बड़ी चुनौती

गर्मी का प्रकोप दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है। इससे मनुष्यों को ही नहीं बल्कि पशुओं को भी गर्मी झेलनी पड़ती है। ग्रामीण क्षेत्रों में लोग मवेशी पालते हैं। यह ग्रामीणों की आय का एक स्रोत है लेकिन गर्मी के दिनों में पशुओं की देखभाल का खर्च दोगुना हो जाता है। गर्मी में घास, पत्तियां सूख जाती हैं जिससे पशुओं को पर्याप्त भोजन नहीं मिल पाता है। पोषक आहार की कमी से पशुओं के स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में पशु चिकित्सा अस्पताल नहीं होने से पशुओं की मृत्यु हो जाती है। इससे पशु पालकों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। राष्ट्रीय पशुधन योजना एक अच्छी योजना है लेकिन धरातल पर इस योजना को अबतक ठीक ढंग से लागू नहीं की गई है। कुछ ग्रामीण इलाकों में यह योजना नहीं पहुंच पाई है। राज्य के नीति निर्देशक

गर्मियों में पशुओं के चारे की कमी को पूरा करने के लिए ध्यान देने की जरूरत है

तत्त्व में पशुओं की रक्षा की बात कही गई है। इसमें कहा गया है कि राज्य, कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा और गाय, बछड़े तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार तथा उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम भी उठाएगा। इस प्रावधान को लागू करने में सरकार असफल रही है। इसलिए यह जरूरी हो गया है कि पशुओं से संबंधित योजनाओं का क्रियान्वयन कार्यक्षमता से हो। पशु अस्पताल हर गांव में होने चाहिए जिससे पशुओं की अकाल मृत्यु को रोका जा सके। इस व्यवसाय से जुड़े लोगों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिससे पशुओं की देखभाल सही तरीके से हो सके। गर्मी के दिनों में राज्य सरकार को चारे के दाम को नियंत्रित करना चाहिए या फिर स्वयं एक ऐसे केंद्र की स्थापना करनी चाहिए जहां चारा सस्ता मिल सके।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

चुनावी घोषणापत्र में किसान और कृषि

लोकसभा चुनाव के मद्देनजर देश की दो प्रमुख राष्ट्रीय पार्टियों भारतीय जनता पार्टी और कांग्रेस ने अपने-अपने घोषणापत्र जारी किए हैं। दोनों दलों के घोषणापत्र में किसान एवं कृषि क्षेत्र को अधिक तवज्जो दी गई है। दोनों दलों के घोषणापत्र में महत्त्वपूर्ण बात यह कही गई है कि किसान, पेंशन, अलग से कृषि बजट, एपीएमसी कानून में सुधार एवं सभी किसानों को किसान सम्मान निधि के दायरे में लाया जाएगा। लेकिन दलों द्वारा जारी घोषणाओं से क्या वास्तव में किसानों के जीवन में खुशहाली आएगी। शायद यह इसके क्रियान्वयन पर निर्भर करेगा। आज देश में कृषि संकट से निजात पाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों को आपसी संघवाद के आधार पर काम करने की आवश्यकता है। एपीएमसी कानून की विफलता आज केंद्र और राज्य सरकारों के बीच कृषि मामलों में आपसी तालमेल नहीं होने के कारण है। जिस प्रकार केंद्र तथा राज्य सरकारों ने आपसी संघवाद के आधार पर जटिल कर प्रक्रिया को जीएसटी के माध्यम से सरल बनाया है उसी प्रकार कृषि संकट का समाधान भी किया जा सकता है।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।